गंगा से चंबल तक डॉल्फिन की गिनती

प्रमोद भार्गव

विश्व प्रकृति निधि और अभयारण्यों के अधिकारियों की देखरेख में गंगा से लेकर चंबल तक की सहायक नदियों में डॉल्फिन की गिनती शुरू हो गई है। लेकिन इन गिनतियों से कभी भी यह तय नहीं हो पाया कि डॉल्फिन की संख्या किस क्षेत्र में कितनी है। बल्कि एक निश्चित स्थल पर डॉल्फिनों की संख्या सार्वजनिक हो जाने से इन पर खतरा और गहरा जाता है क्योंकि शिकारी फिर उसी घोषित क्षेत्र में जाल डालते हैं। यही कारण है कि सभी नदियों में डॉल्फिन की संख्या लगातार घट रही है। इसलिए ज़रूरी है कि जलचर, थलचर और नभचर जीवों की गिनती गोपनीय रखी जाए और इनकी प्रचुरता के स्थल किसी भी सूरत में सार्वजनिक न किए जाएं। यदि विश्व प्रकृति निधि इस तरह का निर्णय लेती है तो कई दुर्लभ जीवों को बचाया जा सकता है।

डॉल्फिन संवेदनशील और नाज़ुक प्राणी होने के चलते मानव-मित्र भी है। अपने इसी प्राकृतिक स्वभाव के चलते जहां वह मनुष्य को पानी में खतरों की जानकारी हैरतअंगेज़ छलांगें मारकर देती रहती है, वहीं डूबते बच्चों को बचाने में भी मददगार साबित होती है। इसके बावजूद मनुष्य है कि चर्बी के लालच में इसका बेतहाशा शिकार कर रहा है। यही कारण है कि संरक्षण के तमाम प्रयासों के बावजूद चंबल ही नहीं गंगा और ब्रह्मपुत्र में भी डॉल्फिनों की संख्या घटती चली जा रही है।

यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि हमारे देश में वन्य प्राणी उद्यानों व अभयारण्यों के विकास की अवधारणा इस मकसद से गढ़ी जा रही है कि वहां पर्यटकों का वाहन समेत आवागमन सुविधाजनक हो और सैलानी कम-से-कम दूरी से वन्य जीवों का दर्शन लाभ ले सकें। इस नज़रिए से हरे-भरे पेड़ काटकर रास्ते बनाए जा रहे हैं और भोग-विलासियों को ठहरने के लिए होटल-रिसॉर्ट बनाए जा रहे हैं। दूसरी ओर, इन जंगलों में सदियों से रह रहे मूल निवासियों को न केवल बेघर किया जा रहा है, बल्कि उन्हें भूखों मरने के लिए भगवान भरोसे छोड़ा जा रहा है।

यही हाल चंबल, गंगा और ब्रह्मपुत्र नदियों का है। इनमें रेत का जायज़-नाजायज़ कारोबार इस हद तक बढ़ गया है कि डॉल्फिन समेत नदियों के विविध जीवों के प्राकृतवास निरंतर सिमटते जा रहे हैं। इस कारण यौनवर्धक दवा निर्माताओं के लिए इनका शिकार करना भी आसान होता जा रहा है।

इस जीव के संरक्षण के उपाय पुख्ता हों, इस दृष्टि से डॉल्फिन को 2009 में भारत सरकार ने राष्ट्रीय जलचर का दर्जा भी दे दिया है। लेकिन 'बाघ' को राष्ट्रीय प्राणी का दर्जा प्राप्त होने के बावजूद जिस तरह से उसके अस्तित्व पर खतरे के बादल मंडरा रहे हैं, कमोबेश वैसी ही दुर्दशा डॉल्फिन की भी है। वैसे असम सरकार ने तो इसे 2008 में ही राजकीय जल-जीव की श्रेणी में रख दिया था। लेकिन क्या किसी जीव को राष्ट्रीय प्राणी घोषित कर देने भर से ही उसके प्रति कर्त्तव्य की इतिश्री हो जाती है? डॉल्फिन के शिकार पर तो वैसे भी 1972 से ही प्रतिबंध लगा हुआ है, इसके बावजूद क्या इनके कुनबे में वृद्धि हो पाई?

435 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैले राष्ट्रीय चंबल

अभयारण्य में बमुश्किल 108 डॉल्फिनों की मौजूदगी बताई जा रही है। इनमें 69 मुरैना ज़िले की सीमा में हैं और 39 भिंड ज़िले की सीमा में शेष बची हैं। इधर आगरा के कुछ मशहूर होटलों में डॉल्फिन का मांस परोसे जाने की घटनाएं भी सामने आई हैं। डॉल्फिन विदेशी सैलानियों के मुंह का स्वाद बढ़ा रही है। इन वजहों से भी बीहड़ों में बहने वाली चंबल नदी में डॉल्फिनों की संख्या तेज़ी से घट रही है। पुलिस वन अमले को चेता चुकी है लेकिन वनाधिकारी वन अमला कम होने का रोना रोते हुए शिकार पर अंकुश लगाने की इच्छाशक्ति पैदा नहीं कर पा रहे हैं।

डॉल्फिन एक ऐसा प्राणी है जो जलचरों में मनुष्य का प्रमुख दोस्त है। डॉल्फिन नदी में उतरने वाले लोगों को पानी गहरा होने की जानकारी कुलांचे मार-मारकर तो देती ही हैं, यदि कोई बच्चा नदी में डूबने अथवा बहने लगता है तो ये उसे किनारे लगाकर उसकी जीवन रक्षा भी करती हैं। नदियों में जानलेवा भंवर कहां-कहां हैं यह जानकारी भी डॉल्फिन मनुष्य को देती है।

मध्यप्रदेश, राजस्थान, उत्तरप्रदेश और बिहार में स्थानीय लोग इसे सोंस कहकर पुकारते हैं, जबकि असम में इसे जिहू नाम से जाना जाता है। अब से दो दशक पहले तक डॉल्फिन के अस्तित्व को कोई खतरा नहीं था लेकिन चीन, जापान और कोरिया में जब से इसका उपयोग यौनवर्धक दवाओं में होना शुरू हुआ है तब से इस पर संकट गहराया है। इसकी चर्बी व खाल को उबालकर तेल भी निकाला जाता है जो मानव अंगों को कोमल व चिकना बनाने के काम तो आता ही है, हड्डियों की पथरा गई गठानें भी इसकी मालिश से खुल जाती हैं, ऐसा दावा प्राकृतिक चिकित्सा करने वाले चिकित्सक करते हैं। ये उपचार चीन व जापान की पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियों में भी शामिल हैं। इन कारणों से भी चीन व जापान में डॉल्फिन की मांग हमेशा बनी रहती है।

डॉल्फिन के शिकारियों को एक डॉल्फिन से तीन से पांच किलो चर्बी आसानी से मिल जाती है। जिसकी कीमत भारत में ढाई हज़ार रुपए प्रति किलो तक आसानी से मिल जाती है। लेकिन जब यही चर्बी तस्करी के ज़रिए नेपाल, चीन की धरती पर पहुंचती है तो इसकी कीमत 30 से 35 हज़ार रुपए प्रति किलो हो जाती है। तिब्बत की सीमा से भी डॉल्फिन चीन पहुंचाई जाती है।

परंपरागत शिकारी आज भी डॉल्फिन को जाल बिछाकर ही गिरफ्त में लेते हैं। जाल में फंसने के साथ ही ये छूटने के लिए फड़फड़ाती हैं और आखिरकार फड़फड़ा कर दम तोड़ देती हैं। गंगा और ब्रह्मपुत्र नदियों में भी डॉल्फिन इसी तरह पकड़कर मार दी जाती हैं। चंबल सफारी अभयारण्य में पर्यटकों को लुभाने के लिए जब से वन विभाग ने इसका प्रचार शुरू किया है, तब से डॉल्फिन के मारे जाने का आंकड़ा भी बढ़ा है। चंबल सफारी में जहां-जहां डॉल्फिन सरलता से देखने में आती है, वहां-वहां सचित्र सूचना-पटल लगाकर इसका प्रदर्शन किया गया है। जबकि इन विशेष स्थानों पर डॉल्फिन की सुरक्षा के लिए न तो वनरक्षक तैनात हैं और न ही सुरक्षा के अन्य इंतज़ाम हैं। लिहाज़ा सफारी में सैलानियों का आमंत्रण इसकी मौत का भी सुगम कारण बन रहा है। ऐसे स्थलों पर आसान पहुंच मार्ग बनाकर भी वन अमले ने शिकार का रास्ता साफ किया हुआ है।

राष्ट्रीय चंबल अभयारण्य में बड़ी संख्या में मगरमच्छ, घड़ियाल और विभिन्न प्रजातियों के कछुए भी पाए जाते हैं। शीत ऋतु में चंबल नदी की सतह पर बड़ी संख्या में प्रवासी पक्षी भी डेरा डालते हैं। इसलिए चंबल सफारी शिकारियों के लिए एक ऐसा अनूठा स्थल है, जिसकी सतह पर शिकारी को कोई न कोई मनचाहा जीव आसानी से सुलभ हो जाता है। ऐसे में वनाधिकारियों की लापरवाही और निश्चिंतता और लालच इनके लिए सोने में सुहागा का काम करती है। बहरहाल गिनती के बाद यह सावधानी बरतने की ज़रूरत है कि इनकी सहज उपलब्धता वाले क्षेत्रों को सार्वजनिक न किया जाए। ***(स्रोत फीचर्स)***